Special Issue Vol-01, Jan. to March 2021

Vidyawarta®

Peer Reviewed International Refereed Research Journal

MAH/MUL/03051/2012
ISSN-2319 9318

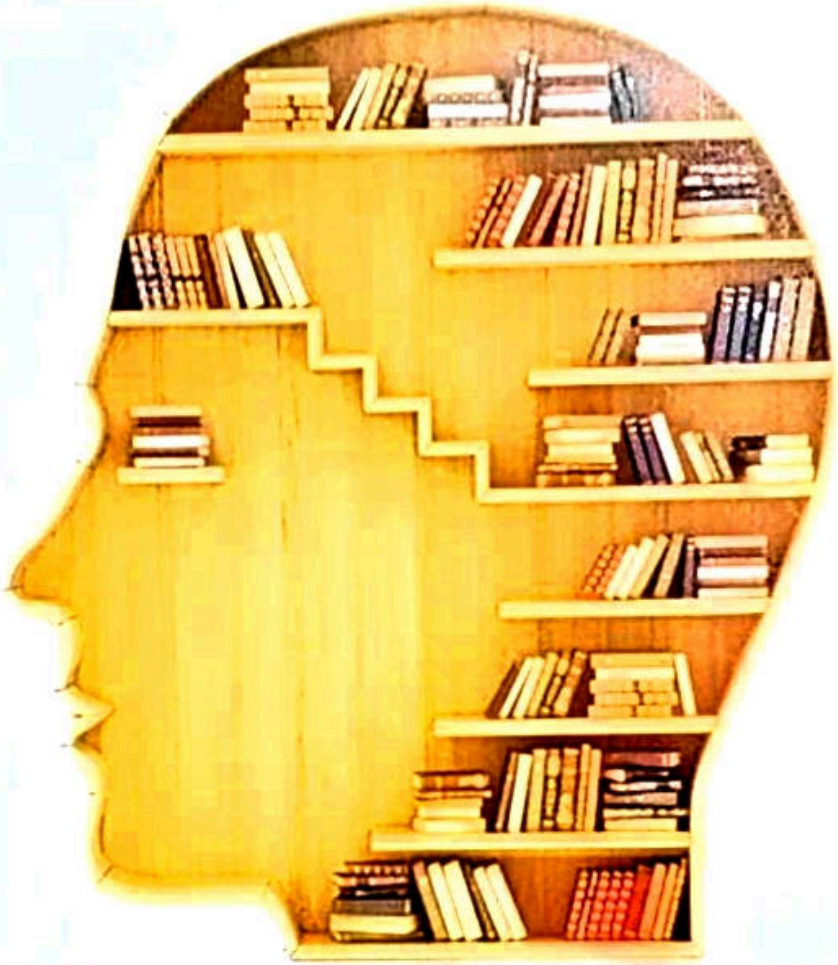

समकालीन विमर्श

अतिथि संपादक
प्रा. डॉ संतोषकुमार लक्ष्मण यशवंतकर
प्रा. डॉ गोविंद गुंडप्पा शिवशेट्टे

१३. मेहरुन्निसा परवेज़ के उपन्यासों में व्यक्त स्त्री समस्याएँ
प्रा.डॉ. शेख मुखत्यार शेख वहाब
||59

१४. क्षमा शर्मा के 'परछाई अन्नपूर्णा' उपन्यास में स्त्री विमर्श
प्रा.कल्याण शिवाजीराव पाटील
||63

१५. स्त्री अस्मिता का संघर्ष– सुधा अरोड़ा
सहा.प्रा.संजीवनी संदीप पाटील.
||66

१६. श्री नरेश मेहता की कहानियाँ
डा एन.पी.नारायण शेट्टी
||70

१७. बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक का हिन्दी कहानी साहित्य स्त्री लेखन के संदर्भ में...
डॉ. प्रकाश भगवानराव शिंदे
||73

१८. गीतांजलि श्री के कथा–साहित्य में स्त्री–चेतना
शिंदे संतोष सखाराम
||76

१९. वैयक्तिक संघर्ष से 'सोशियल स्ट्रगल'तक का सफर मैत्रेयी पुष्पा का लेखन
डॉ.गोविंद गुंडप्पा शिवशेट्टे
||78

२०. संप्रदायिक दंगों में स्त्री दुर्दशा 'झूठा सच' के संदर्भ में
प्रा.डॉ. शेख सैबाशिरीन हारुणरशिद
||83

२१. गीतांजलि श्री के उपन्यास में नारी संवेदना
प्रा. डॉ. संतोषकुमार यशवंतकर
||86

२२. स्त्री–विमर्श की गाथा 'झूलानट'
डॉ. अनिसबेग रज्जाकबेग मिर्झा
||89

२३. सूर्यबाला की कहानी में इक्किसवी शताब्दि के नारी मन की अभिव्यक्ति
सौ. वैशाली वि. भोसकरट, प्रा. एस.एस. माने
||92

२४. वागर्थ पत्रिका मे प्रकाशित कहानीयों मे स्त्री विमर्श
आसमा रिजवान बेग– सौंदलगे
||95

२५. ''समकालीन महिला कविता में स्त्री विमर्श''
प्रा. अनिताकौर प्रितम सिंघ कामठेकर
||98

21

गीतांजलि श्री के उपन्यास में नारी संवेदना

प्रा. डॉ. संतोषकुमार यशवंतकर
कला एवं विज्ञान महाविद्यालय,
शिवाजीनगर गढी

इक्कीसवीं सदी के उपन्यासों में साधारणत: मानवीय मूल्यों, परंपराएँ, रुढ़ियों, अंधविश्वास, स्त्री–पुरुष संबंध, आदर्श, नारी संघर्ष, स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं वैज्ञानिक विचारों में नवीनता की प्रामाणिक छाप मिलती है । वर्ग विभाजित समाज में जहाँ मनुष्य भिन्न सामाजिक वर्गों में बँटा होता है, रचनाकार के सामने हमेशा एक खाई मौजूद होती है ।कोई भी रचनाकार अपने वर्ग से या समुदाय से संबंधित लेखन तो करता ही है लेकिन साथ–साथ वह दूसरे वर्ग या समुदाय की सच्चाई को भी अपनी रचनाओं के माध्यम से उकेरने का भरसक प्रयास करता है । अपने से भिन्न परिस्थितियों–दिनचर्याओं में जीवित मनुष्य को अपनी रचना के समग्रता से प्रस्तुत करने का प्रयास प्रतिबद्ध रचनाकार हमेशा से करता रहा है । ऐसे रचनाकार की रचना के केंद्र में हमेशा समकालीन मनुष्य होता है, जिस पर व्यवस्था और वर्गीय सत्ता के प्रहार सबसे अधिक हो रहें हो । समसामायिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आज मानवीय संबंधों का स्वतंत्र, समर्थ रूप उजागर हो रहा है । उसके प्रत्येक रूपको प्रतिबिंबित करने में इक्कीसवीं सदी के उपन्यासकार सर्वथा सक्षम हैं । इसमें महिला उपन्यासकारों की भूमिका भी उल्लेखनीय एवं महत्त्वपूर्ण रही है ।

इक्कीसवीं सदी की महिला उपन्यासकारों में कृष्णा सोबती, मन्नू भंडारी, उषा प्रियंवदा, शिवानी, चित्रा मुद्गल, शशी प्रभा, ममता कालिया, अलका सवारगी, नासिरा शर्मा, मैत्रेयी पुष्पा, मृणाल पाण्डेय, गीतांजलि श्री आदि उल्लेखनीय हैं । इन स्त्री रचनाकारों ने समाज में स्त्रियों की जो दयनीय स्थिति है उसे यथार्थ के धरातल पर उजागर किया है । साथ ही साथ उनकी रचनाओं में समाज के अन्य दबे–कुचले वर्ग का वास्तव भी देखने को मिलता है । लेकिन यह नि:संदेह है कि उनकी सृजनात्मकता का प्रमुख उद्देश्य हमारे समाज में स्त्रियों की जो दुर्गति है, उनके शोषण के जो तरिके समाज में प्रचलित हैं, उसे उजागर कर स्त्रियों को जागृत करना है । इन महिला रचनाकारों के लेखन की प्रमुख विशेषता यह है कि उनके द्वारा रचनाओं में जो स्त्री पात्र गढ़े जाते हैं, वह केवल कपोल कल्पना नहीं होती है, अपितु वे पात्र समाज में ही होते हैं । अपने ही सामाजिक परिवेश तथा इर्द–गिर्द के पात्रों को वह गढ़कर उनकी त्रासदी को अपनी लेखनी के माध्यम से अभिव्यक्त करती है । इन महिला रचनाकारों की रचनाएँ दर्पण का काम करती है । अत: हम कह सकते है कि इनकी रचनाओं में जो चित्रण उपस्थित है वह समाज का ही प्रतिबिंब है । स्त्री सशक्तिकरण के आंदोलन में इन महिला रचनाकारों की विस्मरणीय भूमिका रही है । इन महिला रचनाकारों ने आज की स्त्री को एक दिशा देने का सफल प्रयास अपनी रचनाओं एवं रचना के पात्रों के माध्यम से किया है । इन महिला रचनाकारों ने अपनी रचनाओं में ऐसे सशक्त एवं सक्षम स्त्री पात्रों को गढ़ा है कि वह आज की स्त्री को नित प्रेरणा देते हैं तथा उनके मनोबल को बढ़ाने में सहायक सिद्ध होते हैं ।

कहां जाता है कि हमारे समाज में आरंभ में स्त्रियों की स्थिति अच्छी थी । उनको समाज में प्रत्येक क्षेत्र में समान स्थान था । वह सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा धार्मिक क्षेत्रों में अग्रेसर थी । गार्गी जैसी स्त्री इसका बेहतरीन उदाहरण है, जो एक समय की विदूषी थी । लेकिन समय के साथ स्त्रियों की स्थिति में परिवर्तन होने लगे और स्त्रियों की स्थिति अत्यंत दयनीय होने लगी तथा वे निरंतर उपेक्षा एवं प्रताड़ना का शिकार होती रही हैं

। भारतीय समाज में प्राय: पुरुषवादी सत्ता का ही वर्चस्व बना रहा है । इसी से पनपी पुरुषवादी मानसिकता ने स्त्रियों को कभी समानता का दर्जा प्रदान किया ही नहीं । समाज में उसे नीच, बुद्धिहीन समझकर निरंतर उसकी उपेक्षा की है । आज के समय में भी पुरुषवादी मानसिकता से ग्रसित लोग स्त्रियों को मात्र एक वस्तु समझते हैं । अनेक ग्रंथों एवं शास्त्रों का हवाला देकर स्त्रियों को आजीवन नरक यातनाएँ सहने के लिए विवश किया जाता है । इस संदर्भ में पंडिता रमाबाई लिखती हैं– "प्राचीन काल में स्त्रियों पर रीति–रिवाजों की ऐसी बंदिशे नहीं थी, उन्हें सम्मानजनक स्थान प्राप्त था धीरे–ध ीरे धर्मशास्त्रों ने स्त्रियों से उनकी आजादी छीन ली । ज्ञान के पूरे भंडार को स्त्रियों की पहुँच में आने से रोक दिया गया जबकि स्त्री को पूरा अधिकार है कि धर्मशास्त्रों के नियमों के आधार पर होने वाले ध ार्मिक निरंकुश आचरण को चुनौती दे । इसके लिए स्त्री को लिखने–पढ़ने बोलने का अधिकार हासिल करना होगा ।"

स्त्रियों की आजादी के समग्र मार्ग स्वार्थवश हमारी समाज व्यवस्था ने अवरूद्ध किए हुए हैं । वह उसी बंधक अवस्था में आजीवन छटपटाती रहती है । जानवरों से भी बदतर जीवन जीने के लिए भारतीय समाज की स्त्रियाँ विवश एवं अभिशप्त हैं । आज भी उन्हें सम्मान से जीने के लिए संघर्ष करना पड़ रहा है । आज भी वे क्षण–क्षण पुरुषवादी मानसिकता का शिकार हो रही हैं ।

भारतीय स्त्रियों की दुर्दशा एवम् उनकी समाज में बढ़ती जा रही असुरक्षा के संदर्भ में ज्ञानेंद्र रावत ने उचित ही लिखा है । उनके अनुसार– "हमारे समाज में नारी प्रतिपल किस सीमा तक भेदभाव, अन्याय, जुल्म, शोषण, उत्पीड़न की शिकार होती है उसे सम्मान तो दिखावे के तौर पर कुछ फीसदी लोगों द्वारा मिल पाता है । जबकि असलियत यह है कि अधिकांशत: उसे हर मोर्चे पर पुरुष के अहं का शिकार होना पड़ता है । फिर वह चाहे घर हो, परिवार हो, दफ्तर हो, बस हो, रेल हो, सड़क हो या फिर खेत–खलिहान हो, पंचायत हो या फिर मजिस्ट्रेट का चौंबर, हर जगह उसे अपमान, घृणा, जिल्लत का सामना करना पड़ता है और इंसानियत को ताक पर रख हैवानियत से भरे नर–पिशाचों की शैतानी भूख और षडयंत्र का शिकार होना पड़ता है।"

इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि शिक्षा के कारण स्त्रियों की स्थिति में धीरे–धीरे ही सही लेकिन परिवर्तन हो रहा है । लेकिन यह कहना उचित नहीं है कि स्त्रियों की जीवनदशा में अपेक्षित परिवर्तन हुआ है । वे आज भी समाज में किसी न किसी रूप में प्रताड़ित हो रही हैं । बड़ी विडंबना की बात है कि आज इक्कीसवीं सदी में स्त्रियों की स्थितियों में जो परिवर्तन होना अपेक्षित था वह नहीं हुआ है । आज भी स्त्रियों पर अन्याय–अत्याचार होने की घटनाएँ निरंतर समाचारपत्रों में छपकर आती हैं । शहरी समाज की तुलना में ग्रामीण समाज की स्त्रियों की दुर्दशा तो और भी अधिक भयावह है । गाँवों में तो स्त्रियों की स्थिति में परिवर्तन न के बराबर हुआ है । ग्राम समाज की स्त्रियाँ तो प्राय: जुल्म का शिकार होती हैं । शहरों में शिक्षा के कारण स्त्रियाँ अपने अधिकारों के एवम् अपनी अस्मिता के प्रति सजग हैं, लेकिन ग्रामीण समाज की स्त्रियाँ आज भी चेतना से कोसों दूर हैं । वे आज भी गाँवों में अज्ञानता के अँधेरे में छटपटा रही हैं ।

हिंदी कथा–साहित्य में जिन महिला रचनाकारों ने स्त्री जीवन की वास्तविकता को उजागर किया है, उनमें एक महत्त्वपूर्ण नाम है गीतांजलि श्री । गीतांजलि श्री ने अलग समस्याओं को लेकर स्त्री जीवन के विविध प्रश्नों के साथ समाज में विघटनकारी रवैये को उजागर किया है । उन्होंने स्त्रियों को आध ार बनाकर सशक्त उपन्यासों का सृजन किया है । इनका साहित्य समाज की जटिलताओं और समय के सत्य को इतनी निकटता और गहनता से रूपायित करने लगा है कि जीवन का कोई पहलू मानव मन और भावनाओं का कोई कोना कही पर भी छूट जाने की संभावना नहीं है । जीवन की संवेदना, जीवन की जटिलताओं को समग्रता और सूक्ष्मता से

रूपायित करने का कार्य गीतांजलि श्री का साहित्य करते हुए नजर आता है ।

गीतांजलि श्री के उपन्यासों में वर्तमान नारी जीवन का यथार्थ अंकित हुआ है । आज स्त्री सामाजिक और पारिवारिक समानता के अधिकार की माँग कर रही है । वह स्वतंत्र जीवन जीना चाहती है, लेकिन पुरुष उसे अपने वर्चस्व में रखना चाहता है । पति का अमानवीय व्यवहार होने पर दांपत्य जीवन असफल हो जाता है । 'तिरोहित' उपन्यास अपनी नवीन संवेदना और आधुनिकता प्रस्तुत करता है । इसमें बहनजी स्त्री की उस गहरी अनुभूति को अभिव्यक्त करती है, जो स्त्री के अंदर सामाजिक सांस्कृति के कुंठित पहलूओं से निर्मित होती है । वह अपने अनुभव के आधार पर विश्लेषित करते हुए कहती है– "कौन जाने सच ही जो औरत अलग–मन जीवन जीने लगती है । औरताना आकर्षण को खो देती है । कोई आकार, जो औरत है, उससे बाहर फट पड़ती है । उसे देखकर आदमी की न पिपासा जगती है, न वासना । न मन में वात्सल्य उठता है, न तन में मांसल इच्छा ।... जो औरत पकड़ में नहीं आती वह औरत नहीं ।"

उपन्यास में स्त्री शोषण की सदियों से चली आ रही परंपरा का बदलता स्वरूप, परिवार में गिरफ्त विवश स्त्री, पारिवारिक टकराहट एवं घुटन, मानवीय संबंधों में बनते–बिघड़ते संबंध आदि समस्याएँ दिखाई देती हैं ।

उपन्यास में ललना भी एक ऐसी स्त्री पात्र है जो समाज और पुरुष वर्ग से पीड़ित है । ओमबाबु जिसने ललना का इस्तेमाल किया और समाज के धक्के खाने के लिए उसे छोड़ दिया– "कितनों को अंधा बना चुकी है यह ललना । यह ऐसी बात कि जो बार–बार होकर भोथरा चुकी है । न डराती है, न चुभती है, अब हँसती है।" लेकिन ललना हमेशा जिंदगी में आनेवाली समस्याओं से जुझती रहती है । गीतांजलि श्री के इस उपन्यास में प्रेम के बारे में नया दृष्टिकोण केवल व्यक्ति संबंधों को ही नहीं मनुष्य की नियति के मार्मिक रहस्यों को भी उदघाटित करता है ।

इस तरह गीतांजलि श्री ने पारिवारिक संबंधों में टकराव होने की वजह से किस तरह वह परिवार बिखर जाता है यही दर्शाने का सफल प्रयास किया है । उन्होंने उपन्यास के माध्यम से शहरी जिंदगी की जटिलता और वास्तविकता को पकड़ने का भरसक प्रयास किया है ।

संदर्भ ग्रंथ सूची

१. औरत: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन, संपादक– ज्ञानेंद्र रावत, विश्वभारती पब्लिकेशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण २००६
२. तिरोहित, गीतांजलि श्री, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण २००७
३. हिंदू स्त्री का जीवन, पंडिता रमाबाई, अनुवादक– शंभू जोशी, संवाद प्रकाशन, मेरठ उत्तर प्रदेश, प्रथम संस्करण २००६

❑❑❑